International Journal of Applied Research 2019; 5(2): 270-271

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(2): 270-271
www.allresearchjournal.com
Received: 29-12-2018
Accepted: 02-01-2019

कुमारी मनीषा
शोधार्थी, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविध्यालय मधेपुरा, बिहार, भारत

Correspondence Author:
कुमारी मनीषा
शोधार्थी, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविध्यालय मधेपुरा, बिहार, भारत

औपनिवेशिक भारत में हुए आर्थिक तथा सामाजिक दलित आंदोलनों का प्रभाव

कुमारी मनीषा

सारांश
प्रस्तुत अध्ययन औपनिवेशिक भारत मे दलितों के सदर्भ में हुए आर्थिक एवं सामाजिक आंदोलनों पर आधारित है, जिसके अंतर्गत तत्कालीन जाति व्यवस्था तथा रुढ़िवादी परंपराओं से ग्रसित भारतीय संस्कृति में निम्नतर समझे जाने वाले वर्ग- दलित वर्ग के विकास से संबंधित अध्ययन की समीक्षा कि गई है। अतः यह अध्ययन इस बात कि पुष्टि करता है कि स्वतंत्रता के इतने दशक बीत जाने के बाद भी दलितों का समुचित विकास नहीं हो सका है।

मूल शब्द: जाति पहचान की प्रासंगिकता, दलित मुद्दों का एकीकरण, प्रतिनिधित्व की राजनीति, दलितों का दृष्टिकोण|

प्रस्तावना
दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ मर्दित, दबाया या कुचला हुआ होता है, अर्थात सदियों से समाज का वह वर्ग जिसे आर्थिक, सामाजिक ओर राजनीतिक रुप से पिछड़ा बनाया गया हो, दलित कहलाता है।

पौराणिक काल से ही समाज के उच्च वर्गों द्वारा दलितों का शोषण किया जाता रहा है, किंतु भक्ति, बौद्ध धर्म या अन्य धार्मिक आंदोलन के रूप में जाति विरोधी विचार धारा की ऐतिहासिक परंपरा के अलावा ब्रिटिश शासन द्वारा किये गए परिवर्तनों ने दलित समाज के एक वर्ग को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया गया कि वे समाज द्वारा प्रदत्त अपनी सामाजिक पहचान को चुनौती देने के साथ साथ अपने सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक अधिकारों पर दृढ़ता पूर्वक दावा कर सके| अपनी सामाजिक गरिमा और न्याय के अपने दावे को न्याय संगत बनाने हेतु वैकल्पिक परंपरा के तहत दलित नेतृत्व ने निणृय निर्धारण प्रक्रिया में राजनीतिक सत्ता प्राप्ति के साथ-साथ शिक्षा और रोजगार के अवसर प्राप्त करने के लिए संघर्ष करना शुरू कर दिया| इन्हीं संघर्षों के परिणति में दलित आंदोलनों का अविर्भाव हुआ। दलित आंदोलन कि शुरुआत युं तो आदि काल से ही हो गई थी, लेकिन इस आंदोलन ने औपनिवेशिक काल में जोर पकड़ा। दलित आंदोलन के नेताओं के लिए सबसे बड़ी चुनौती भारत के विभिन्न सामाजिक संगठनों के अलग अलग स्वार्थों को एकीकृत कर औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संयुक्त आंदोलन की ओर प्रवत्ति होने की थी| इस अध्याय में हम दलितों का सर्मथन प्राप्त करने के तारतम्य में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा दलितों के जीवन को प्रभावित करने वाले मुद्दे से संबंधित की गई पहल पर विचार करेंगे| भारत में ब्रिटिश शासन के मद्देनजर जो प्रशासनिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तन हुए उसने विशेषकर दलितों के हित संरक्षण हेतु उठाये गए कदम ने दमनकारी जाति व्यवस्था के खिलाफ उनके अव्यक्त असंतोष को व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया |

भारत ने दलितों के अस्प्रश्यता की समाप्ति और सामाजिक समानता तथा न्याय की वकालत की|

अध्ययन का उद्देश्य

इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य औपनिवेशिक काल में दलितों पर दमन, हीन भावना, अस्प्रश्यता की भावना पर अध्ययन करना है | भारत में दलितों पर अत्याचार किये गए, उन्हें अछूत समझा गया, हीनता की दृष्टि से देखा गया| भीमराव आंबेडकर और गांधी जी के आर्थिक तथा सामाजिक आंदोलनों के कारण से ही दलितों को समाज में समाल अवसर मिला| अतः ये अपने अधिकार के प्रति जागरूक हुए| परिणामतः दलितों को समाज में उनका अधिकार और सम्मान दिया गया|

पृष्ठभूमि

जाति पहचान की प्रासंगिकता

भारत में दलित चाहे किसी भी प्रांत के हो जाति व्यवस्था के नाम पर वे दमन के विभिन्न रूपों के शिकार हुए| यह भी सही है कि जाति के नाम पर किए जाने वाले शोषण के खिलाफ समय समय पर लोगों ने अपनी आवाजें भी बुलन्द की| 1857 की महान जनक्रांति ने औपनिवेशिक शासन की जड़ें हिला दी और ब्रिटिश नौकरशाही अत्यंत गंभीरता से राजनीति को तैयार करने में लग गए जिससे स्थानीय स्तर पर उभरने वाले किसी भी प्रकार के असंतोष जो साम्राज्य के लिए खतरा बन सकते हो को रोका जाए|
भारतीय राजनीतिक मुख्यधारा से अलग दलित महत्वाकांक्षा को महात्मा ज्योतिबा फुले जिन्होंने भारत में दलितों की आज़ादी के लिए आवाज उठाई थी| फुले जाति विरोधी आंदोलन के प्रथम प्रचारक माने जाते हैं| उन्होंने स्पष्ट किया कि 'एक राष्ट्र का नाम तब तक सार्थक नहीं हो सकता जब तक कि राजा बाली के भूमि के सभी लोग जैसे शूद्र, भील और मछुआरे आदि पूर्ण रुप से शिक्षित हो जाए|

दलित मुद्दों का एकीकरण

अपने शुरुआती दौर में नेताओं ने अपने आप को सामाजिक समस्याओं के समाधान के बजाय राजनीतिक और प्रशासनिक मुद्दों में संलग्न रखा| व्यक्तिगत स्तर पर गोपाल कृष्ण गोखले और लाला लाजपत राय जैसे नेताओं ने कहा कि अस्प्रश्यता का उन्मूलन और सामाजिक सुधार अत्यंत आवश्यक है| इन्हीं सुधारों को मद्देनजर रखते हुए, निम्नलिखित कदम उठाए गए:

1. 1917 में कलकत्ता में भारतीयों ने अस्प्रश्यता में प्रस्ताव पारित किया और दलितों के ऊपर रुढियों द्वारा जबरन थोपी गयी सभी विपदाओं के उन्मूलन की गुजारिश की गई।
2. 1924 में गांधी जी ने मन्दिर प्रवेश के अस्प्रश्यों के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए केरला समिति द्वारा आयोजित वैकूम सत्याग्रह का सर्मथन किया|

प्रतिनिधित्व की राजनीति

1930 में इलाहाबाद में अखिल भारतीय दलित वर्ग के नेताओं की विशेष बैठक बुलाई| इस सम्मेलन ने अबेंडकर के नेतृत्व में अखिल भारतीय दलित वर्ग समीति के प्रथम सत्र में लिये गये निणृय को अमान्य कर दिया| हिन्दू महासभा का नेतृत्व भी इसको लेटर समान रूप से चिंतित था ताकि उसे हिन्दुओं के विघटन को रोकने का रास्ता प्राप्त हो सके| दलितों के एक समूह ने यह बयान दिया कि अखिल भारतीय दलित वर्ग संगठन भारत में दलितों का प्रतिनिधित्व नहीं करता|

दलितों का दृष्टिकोण

औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध विभिन्न जन आंदोलन में जनता की भागीदारी के अलावा राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्यधारा में लाने के प्रयास में भी सफलता मिली| दलितों द्वारा दमन और शोषण का जो सामना किया गया था उसके प्रति अंबेडकर चिंतित थे| अम्बेडकर का मानना था कि दलितों के समान अधिकार को सुनिश्चित किये बिना राजनीतिक आजादी महत्वहीन है|
अम्बेडकर जी ने कहा कि भारत में शासक वर्ग जिस आजादी के लिए संघर्षरत था वह भारत में शोषित वर्ग पर शासन करता है|

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के विशलेषण को समझने से स्पष्ट है कि भारत में दलितों का शोषण किया गया| इसके लिए गांधी जी, अम्बेडकर जी और अन्य सुधारवदियों द्वारा कई जनसभाएँ कि गईं, कई आंदोलन किये गए। इन सभाओं एवं आंदोलनों के परिणामस्वरूप लोगों में जागृति पैदा हुई एवं वे इस बात को समझने लगे कि दलित भी समाज का मुख्य अंग हैं एवं दलितों के साथ भी समानता का व्यवहार होना चाहिए। तथा उन्हें उनका अधिकार दिलवाया जाना चाहिए और आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक रुप से सशक्त किए जाने कि आवश्यकता है।

संदर्भ सूची

1. माता प्रसाद- भारत में दलित जागरण और उसके अगृदूत, सम्यक् प्रकाशन, गौतम प्रिन्टर्स, नयी दिल्ली 2010|
2. डॉ. राधेषरण, डॉ. सत्येंद्र शरण- प्राचीन भारत का इतिहास, मध्यप्रदेश ग्रन्थ अकादमी, भोपाल-2011|
3. डॉ. कैलाश खन्ना- प्राचीन भारत का इतिहास- भाग-1 नयी दिल्ली 2008
4. चमन लाल, दलित साहित्य: एक मूल्यांकन, Rajpal and sons Prakashan 2009